इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहु- रथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान्।
एकं सद् विप्रा बहुधा वद- न्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः।

(ऋग्वेदसंहिता 1/164/46 तथा अथर्ववेदसंहिता 9/10/28)

''जो एक सत् रुद्र है उसे ही बहुत प्रकार से मन्त्रद्रष्टा ऋषि वर्णन करते हुए इन्द्र, वरुण, मित्र, अग्नि, वायु, यम और उत्तम प्रकाशयुक्त, उदय-अस्तरूप से गमन करनेवाले, सूर्यरूप पक्षी इत्यादि नामों से पुकारते हैं।''

इस सम्पूर्ण पुस्तक को उपरोक्त वैदिक ऋचा का वेदों, उपनिषदों, रामायण ग्रन्थों, महाभारत सभी महापुराणों तथा अनेक उपपुराणों पर आधारित एक भाष्य माना जा सकता है। इसमें परब्रह्म सदाशिव के तत्त्व का विवेचन, अन्यान्य देवों से उनकी विशेषता तथा उनकी उपासना की सार्वभौमिक अनिवार्यता की चर्चा करते हुए उनकी अन्य प्रमुख देवों से अनन्यता का प्रतिपादन किया गया है। परब्रह्म तो एक ही है जो सर्ग, रक्षा एवं लय आदि कारणों से अपने को अनेक देव-रूपों में प्रकट करता है। अतः सभी देवरूप मूलतः एक ही हैं। और इस दष्टि से देखने पर वे सभी रूप आपस में समान हैंμन कोई छोटा है न बड़ा। इस प्रकार की उदार दष्टि ही सभी ग्रन्थों का आशय है जिसकी उपेक्षा कर देने से विशेष देव का उपासक अन्य देवों के उपासकों से झगड़ पड़ता है और वह पाप का भागी बनता है।

यह पुस्तक विरोधी विचारधाराओं, मुख्यतः शैव एवं वैष्णव, के समन्वय का एक लघु-प्रयास है। इस प्रयास में हमने पहले बहुप्रचलित एवं प्रचारित देवता (मुख्यतः उत्तर भारत में) भगवान् विष्णु की सभी विशेषताओं का भगवान् शिव में होना एवं उनकी उपासना की सार्वभौमिकता दोनों ही शास्त्र-सम्मत हैं दिखाकर उन दोनों में तादात्म्य का संबंध स्थापित किया गया है। संक्षेपतः इस पुस्तक में शिवतत्त्व एवं उसकी उपासना संबंधी अनेक पहलुओं पर शास्त्रोचित प्रकाश डाला गया है, जो मुख्यतः शैवों एवं वैष्णवों में पारस्परिक साम जस्य स्थापित करने में सहायक हो सकता